मीकू फँसा पिंजरे में

बाहर निकलने की तमाम कोशिशें बेकार थीं। मीकू को विश्वास हो गया कि इस बार वह घर के लोगों की चाल में फँस गया है। पहले ाी लोग उसे पकड़ने के कई तरीके आज़माते रहे थे पर वह साफ बच निकलता था। लेकिन इस बार वह फँस चुका था और अकेला वही नहीं उसके लग ाग तीन-चौथाई दर्ज़न साथी ाी फँसे थे जो बाहर निकलने की पुरज़ोर कोशिश कर रहे थे।

दाएँ-बाएँ, आगे-पीछे, जिधर देखो उधर मज़बूत तारों का ऐसा जाल था जिस पर मीकू के दाँतों का कोई असर नहीं होता था। अपने दाँतों पर तो मीकू को बड़ा गर्व था। कपड़े से लेकर लकड़ी तक कोई ाी चीज़ उससे बच नहीं पाती थी। एक बार उसने किवाड़ का एक पूरा कोना रातोंरात कुतर डाला था क्योंकि किवाड़ों से उसका राशन लाने का रास्ता बन्द हो जाता था। सारी रात "कटर-कटर" होती रही पर कोई "हट्ट-हुश्श" करने के अलावा कुछ नहीं कर पाया। सुबह किवाड़ों के बीच सबने बड़ा-सा सुराख बना देखा।

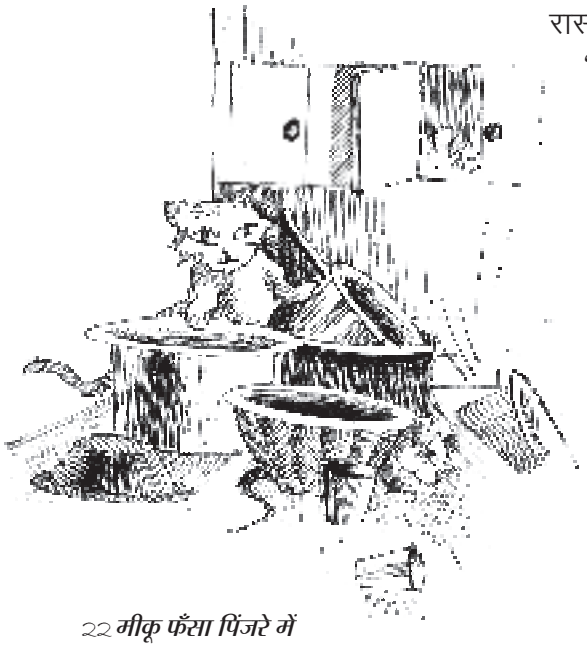

मीकू याद करता है कि उसने अब तक बड़ा रोबदार और सम्मान ारा जीवन बिताया था। वह सबका बॉस था क्योंकि सबसे मोटा तगड़ा और ताकतवर चूहा

वही था और
स ाी साथियों
मानने पर मी

घर के
आतंक का
क ाी रसोईघ
पूँछ ही उसे
लगाते समय
बदहवास-सा
वह ओझल
'मोटा ैंसा'

वही था और बुद्धिमान ी। ऐसे कई अवसर आए जब अपनी सूझबूझ से वह स ी साथियों को बचा ले गया था इसलिए सब उसकी बात मानते थे। न मानने पर मीकू किसी को ी दबोचकर अधमरा कर सकता था।

घर के लोगों में ी उसका खौफ कम न था। सब उसकी चालाकी और आतंक का लोहा मानते थे। रीतू तो उससे बहुत ज़्यादा डरती थी। अकेली क ी रसोईघर या ाण्डारघर में नहीं जाती थी। काली रस्सी जैसी उसकी पूँछ ही उसे डराने के लिए काफी थी। एक बार ताक से आले में छलाँग लगाते समय वह रीतू के सिर पर गिर पड़ा और बालों में उलझकर बदहवास-सा ागा, क ी गर्दन की ओर तो क ी कानों की ओर। जब तक वह ओझल होता रीतू की चीखें रोने में बदल गई थीं। वह उसे अब तक 'मोटा ैंसा' कहती है।

अम्मा ी मीकू से तंग रहती थी। उनकी कोठरी में मीकू खूब धमा-चौकड़ी मचाता था। रात में सोती हुई अम्मा के ऊपर से कई बार गुज़रता

था। अम्मा लाठी ठकठकाती हुई चिल्लातीं, "अरे गोलू कल इस 'साँड' के लिए पिंजरा ले आना।"

गोलू मीकू से खासा चिढ़ा हुआ था क्योंकि चूहे पकड़ने में उसकी सारी चतुराई और होशियारी मीकू के मामले में बेकार साबित हो गई थी।

एक हाथ में डण्डा और दूसरे में कपड़ा लिए, एक दरवाज़े पर माँ को और नाली पर ाई को तैनात किए घण्टों बीत जाते। क ी सन्दूक को पीटते, क ी कनस्तर को खटखटाते तो क ी अलमारी के पीछे ठकठकाते। मीकू आराम से किसी डिब्बे के पीछे बैठा सबकी परेशानी का आनन्द लेता रहता था और अचानक लम्बी छलाँग लगाकर इस तरह ाग जाता कि सब बस 'उई' करके रह जाते थे।

लेकिन अब वही मीकू असहाय सा पिंजरे में बन्द हो गया था। कहाँ यह कैद और कहाँ वह मस्ती, धमा-चौकड़ी। चाहे रोटियों का डिब्बा हो, सब्ज़ियों की डलिया हो, अनाज की बोरियाँ हो, कपड़ों की अलमारी हो या किताबों की पेटी, कुछ ी उसकी पहुँच से बाहर न था। सुबह जब गोलू की माँ को रोटियाँ नाली में खोंसी मिलतीं और कुतरे आलू-टमाटर पूजाघर में, और गोलू की बनियान बिल में ठूँसी हुई मिलती तो वे बड़बड़ातीं, "पूसी को तेरा कलेवा न कराया मुटल्ले तो..."

पूसी को ी कम नहीं छकाया है मीकू ने। रात में जान-बूझकर पूसी के लिए कमरे खोल दिए जाते थे। पूसी रात ार बरतन-डिब्बे पटकती-गिराती थक जाती थी पर मीकू को क ी अपना ग्रास नहीं बना पाई।

लेकिन अब... मीकू ने अफसोस किया कि बाबा ने उसे बचने के तमाम तरीके बताए थे पर यहाँ कोई काम नहीं आया। यह कोई नया तरीका न था चूहों को फँसाने का जिसे बाबा नहीं जानते थे। उन्होंने उस जाल का ज़िक्र तो कई बार किया था जिसे कबूतर लाए थे। बाबा ने जाल को काटकर अपनी होशियारी का और दोस्ती का फर्ज़ नि ाया था। मीकू के बाबा बहादुर थे। उन्होंने 'वनराज' को ी जाल से आज़ाद कराया था। आज ी बाबा की यह कहानी किताबों में छपती है। बाबा ज़रूर इस नई तरकीब को नहीं जानते थे। रात के अँधेरे में एक स्वादिष्ट खुशबूदार टुकड़ा पड़ा था कहीं। मीकू उसे खाने के लिए बढ़ा ही था कि अचानक झुक गया और 'खट्' की आवाज़ हुई और उसने अपने आपको कैद पाया। यही नहीं एक-एक करके उसके दूसरे साथी ी आते गए। उन्हें खतरे का अन्दाज़ा ी नहीं था शायद।

"ओ रीतू, मालू, मोनू," मीकू ने सुना, गोलू कह रहा था, "सब लोग आओ... देखो, एक नहीं दो नहीं, पूरे दस चूहे..."

"ओ ाया इतने चूहे... कैसे एक-दूसरे की ओट में घुसे जा रहे हैं... शायद ठण्ड लग रही है," यह गोलू की बड़ी बहन थी।

"नहीं दीदी, ये इसलिए मुँह छुपा रहे हैं कि कहीं इनका फोटो खींचकर हम अखबार में न छपवा दें..." और फिर ज़ोरदार हँसी।

"दूसरों का मज़ाक उड़ाना क्या अच्छी बात है?" मीकू बोल सकता तो यही कहता। सब उसी को लेकर मज़ाक कर रहे थे, "कहिए मोटूमल जी! क्या-क्या अण्ट-शण्ट खाते रहे हो... पर अब चिन्ता न करें। हम आपकी 'डायटिंग' करवा देंगे।"

गुस्से के मारे मीकू की मूँछें तन गईं। उन अशिष्ट लड़कों का कुछ नहीं बिगाड़ सकता था। कोई उसकी पूँछ खींच रहा था तो कोई लकड़ी से कोंच रहा था। गोलू ने तो पूसी को ही पिंजरे की तरफ हुड़का दिया था। मीकू काँप गया था डर के मारे। उसके कुछ साथियों के नीचे की ज़मीन गीली हो गई थी। यह कोई तरीका है सताने का?

दिन ार वे सबके लिए नुमाइश बने रहे। सब उन पर फब्तियाँ कसते रहे। किसी ने ी उनके पेट का हाल नहीं पूछा। बाबा ठीक कहते थे कि आदमी बड़ा खुदगर्ज़ होता है। अपने फायदे के लिए वह कुत्ते-बिल्ली तो क्या हाथी और शेर को ी अपना गुलाम बना लेता है और पैसा कमाता है। मीकू परेशान था। उसके साथी उससे शिकायत कर रहे थे, "मीकू ाया, यहाँ से निकलने का कोई इन्तज़ाम सोचा है या यहीं सड़कर मरने का विचार है।"

"चुप रहो," मीकू चीखा, "तुम मुसीबत में हो तो मैं ी आराम से नहीं हूँ। मुझे सोचने दो... सुनो वे दो लड़कियाँ जो खाना खा रही हैं हमारे विषय में ही बातें कर रही हैं।"

"दीदी ये सब ूखे होंगे।"

"हाँ"

"इनको रोटी डाल दूँ?"

"नहीं," बड़ी लड़की ने कहा, "तुम ूल गई कि इन्होंने तुम्हारी नई

फ्रॉक काट दी थी। इनके साथ कोई ी रियायत करना बेकार है।"

मीकू ने देखा उस प्यारी नन्ही लड़की का चेहरा बुझ-सा गया है जिसका नाम मालू है और जिसकी आँखें बड़ी और नीली हैं। थोड़ी देर बाद जब उस लड़की ने फ्रॉक में छुपाकर रोटी लाकर पिंजरे में डाल दी तब मीकू का दिल ार गया।

दूसरे दिन जब गोलू अपने साथियों के साथ पिंजरा लेकर चला तो मीकू ने जीने की उम्मीद छोड़ दी क्योंकि उसने गोलू की योजना सुन ली थी। वे उन्हें पानी में डुबाकर अधमरा-सा करके उस मैदान में फेंकने वाले थे जहाँ चीलों व गिद्धों का जमावड़ा रहता है।

मौत के इतने करीब आने पर उसने अपने घर को याद किया जिसकी नकल करके आदमी ने ज़मीन के अन्दर बाज़ार और रेलमार्ग बना लिए हैं। सुना है सीप-घोंघों की नकल करके वह समुद्र में ी बस्तियाँ बनाएगा। चिड़ियों की तरह आसमान में तो वह उड़ता ही है। आदमी ी खूब है!

मीकू आगे नहीं सोच पाया क्योंकि उस पल वह ठण्डे पानी में डुबा दिया गया, पिंजरे सहित। पानी से तो मीकू को वैसे ही बड़ी चिढ़ थी। महीनों तक नहाता नहीं था। लेकिन अब एक बार, दो-बार... तीन, चार बार... दुष्ट लड़के बार-बार पिंजरे को पानी में डुबा रहे थे और हँस रहे थे।

"देखो कैसी ागदड़ मची है चूहों में..." लड़के कह रहे थे। मीकू सोच

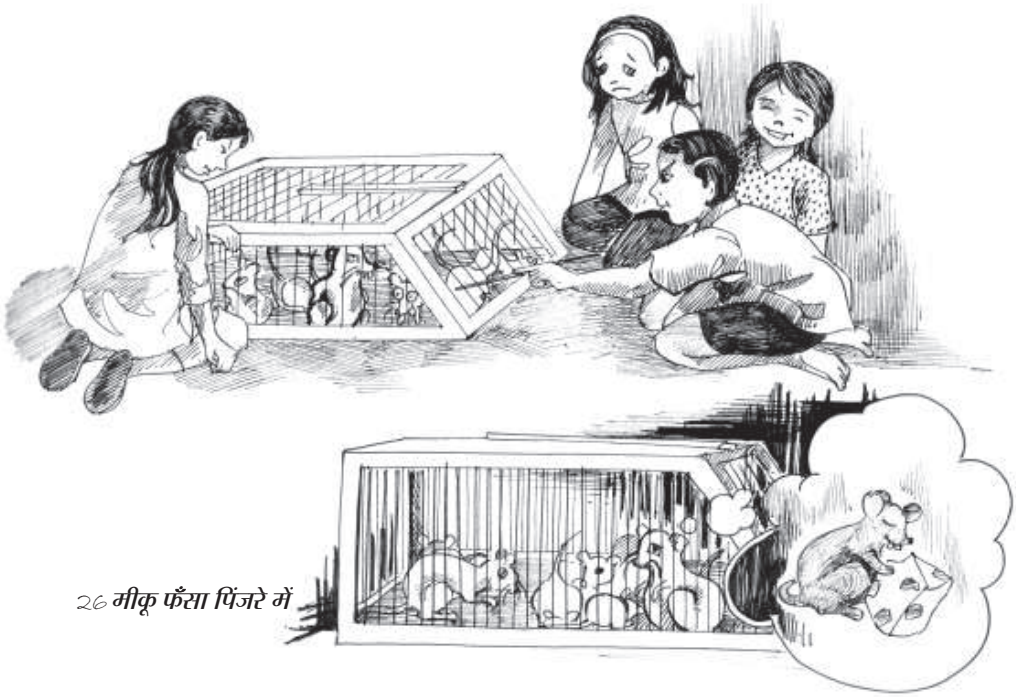

रहा था कि म

गोलू ी
दिखाना चाह
गुड़ियों की
बैंडमास्टर
सजाता था।

मालू उ

"मालू ड
मालू वहाँ से
मालू की आँ

"मालू!
हिलाया।

"लेकिन

"कहा थ

"तुम तो
होकर कहा।

मालू ने
करूँगी।"

गोलू ने

"मालू स
की आँखों में

"ओ...
चिड़िया, मोर
चूहों का नाम

मालू श
रह सकी।

रहा था कि मालू होती तो शायद इन लड़कों को रोक लेती।

गोलू ी मालू के बारे में सोच रहा था। मालू को वह चूहों का तमाशा दिखाना चाहता था। मालू उसकी सबसे प्यारी बहन थी। उसके गुड्डे-गुड़ियों की शादी में वह दोनों हाथ-मुँह से लगाकर 'तु-तु' करता हुआ बैंडमास्टर ज़रूर बनता था। उसकी गुड़ियों के लिए कार ी बनाकर सजाता था। यह पिंजरा ी वह मालू के कहने पर लाया था।

मालू उस समय चुपचाप पेड़ के पास खड़ी थी।

"मालू ऽऽऽ देख कितना मज़ेदार खेल है, आ जा," गोलू चिल्लाया। पर मालू वहाँ से नहीं आई। गोलू पिंजरा छोड़कर मालू के पास गया। देखा मालू की आँखें गीली थीं।

"मालू! क्या तुम्हें यह अच्छा नहीं लग रहा?" मालू ने ना में सिर हिलाया।

"लेकिन यह पिंजरा तो तुमने ही लाने को कहा था।"

"कहा था... लेकिन इतना सताने को थोड़े ही कहा था बेचारों को?"

"तुम तो बेकार ही दुखी हो रही हो दुष्ट चूहों के लिए," गोलू ने हैरान होकर कहा।

मालू ने पैर पटकते हुए कहा, "मेरी बात नहीं मानते तो मैं बात नहीं करूँगी।"

गोलू ने लपककर मालू का रास्ता रोक लिया।

"मालू रुको... अच्छा बताओ क्या करूँ? इन्हें छोड़ दूँ?" गोलू ने मालू की आँखों में झाँका। मालू मुस्कराई।

"ओ... मर गए," गोलू ने माथा पीटा। "मुझे क्या मालूम था कि चिड़िया, मोर, बिल्ली, कुत्तों और गिलहरियों के साथ अब मालू के दोस्तों में चूहों का नाम ी जुड़ गया है।"

मालू शरमा गई। पर उसकी आँखों में चमकती खुशी किसी से छुपी न रह सकी।

कुट्टू कहाँ गया?

"कुट्टू आखिर कहाँ चला गया?" कालू और साँवरी हैरान थे और परेशान ी।

सुबह जब दोनों दाना-दुनका और कीड़े-मकोड़े लेने गए थे तब घोंसले में चारों बच्चे मौजूद थे। लौटने पर उन्हें केवल तीन बच्चे मिले। काफी उदास और सहमे हुए। उन्हें देखते ही तीनों चिल्ला उठे, "माँ... माँ... कुट्टू पता नहीं कहाँ गया है।"

"हम तो सोने की कोशिश कर रहे थे चुपचाप।"

"और हमें छोड़कर जाने कहाँ चला गया।"

तीनों बच्चों की बातें सुनते हुए वे दोनों कितनी ही बातें सोच रहे थे।

कालू-साँवरी का घोंसला नीम की सबसे ऊँची टहनियों के झुरमुट में बना था जो आसानी से दिखाई तक नहीं देता था। बिल्ले और दूसरे दुश्मनों के वहाँ पहुँचने की तो सोचना बेकार है। वहाँ पहुँचना तो बाज़ जैसे चुस्त

और परेशान

थे तब घोंसले
मिले। काफी
. माँ... कुट्टू

घ रहे थे।

के झुरमुट में
दूसरे दुश्मनों
ज़ जैसे चुस्त

और चालाक शिकारी के लिए ाी उतना आसान नहीं है। इसलिए यह सोचना तो बेवकूफी होगी कि घोंसले में से कोई कुट्टू को ले गया होगा। और, कोई ले ाी जाता तो बाकी तीन को क्यों छोड़ता? तो फिर कुट्टू कहाँ और कैसे चला गया?

हालाँकि कालू और साँवरी जानते थे कि बड़े होने पर बच्चों को एक दिन घोंसला छोड़कर आज़ादी से उड़ना ही है, पर अ ाी इसके लिए कुछ और समय की ज़रूरत थी। अ ाी तो उनके पंख छोटे और कमज़ोर थे। इनसे घोंसले में ही फड़फड़ाने का शौक तो पूरा किया जा सकता था, पर अ ाी यों स्वतंत्र रूप से अकेले ही उड़ जाने की बात सोचना उनके लिए कुछ मुश्किल था। इसलिए कुट्टू का यों गायब हो जाना उनके लिए अफसोस के साथ हैरानी की बात ाी थी।

कालू इन्हीं विचारों में डूबा था कि बिल्लू बिल्ला वहाँ से गुज़रा। बिल्लू खासा मोटा-ताज़ा और बड़ा घाघ बिल्ला था। अण्डों और नन्हे बच्चों पर उसकी नीयत हमेशा बुरी रहती थी। कुट्टू के बारे में वह कई चिड़ियों से बातें करते देखा गया था।

"अगर कुट्टू उड़ने की कोशिश में नीचे गिर पड़ा होगा तो ज़रूर बिल्लू..." आगे की दुखद कल्पना से बचने के लिए उसने बिल्लू से ही कुछ इस तरह पूछा ताकि उसे शक न हो, "बिल्लू! कुट्टू आज तुम्हारे साथ था न?"

"कुट्टू!" बिल्लू आँखें चमकाकर बोला, "सुबह से मैं उसी को तलाश रहा हूँ! कहाँ है वह?"

"चलो, कुट्टू बिल्लू के हाथ तो नहीं आया।" कालू ने सोचा और पूछताछ के लिए नीम के तने के पास गया।

"नीम ाई! तुमने कुट्टू को कहीं देखा है?"

"मैं तो सुबह से ही हवा के सुहाने झोंकों में झूम रहा हूँ कालू ाया। नन्ही से पूछकर देखो न?"

"नन्ही बहन," कालू लपककर नन्ही गौरेया के पास पहुँचा, "कुट्टू अपने घोंसले में नहीं है... तुमने कहीं उसे देखा?"

"घोंसले में नहीं तो ज़रूर आसमान की सैर कर रहा होगा। चिन्ता की

क्या बात है कालू ाई!" कालू नन्ही को समझा पाता कि अ ाी वह इस तरह उड़ने लायक नहीं है, पर वह बिना सुने फुर्ती से दूसरे पेड़ पर जा बैठी।

उधर साँवरी ननकू नेवले को अपनी व्यथा कथा सुना रही थी।

"...ज़रा पूरी बात खुलकर समझाओ।" ननकू ने कान खुजाते हुए लाल घुंघची जैसी आँखें नचाईं।

साँवरी ने सारी बात विस्तार के साथ बताई। ननकू ने दो-चार बार और पलकें झपकाईं, फिर बोला, "कुट्टू बेशक वहीं होगा जहाँ इस समय उसे होना चाहिए।"

"ननकू ैया, यह मज़ाक का समय नहीं है," साँवरी ने ारे गले से कहा। "बच्चे ने सुबह से कुछ ाी नहीं खाया है। जाने कहाँ ाटक रहा होगा? हो सके तो तुम..."

साँवरी अपनी बात पूरी कह पाती इससे पहले ही ननकू लकड़ी के ढेर में गायब हो गया।

सोना गिलहरी, कनसुन मुर्गी, गुलबी मैना और पिंकू फाख्ता ने ाी उन्हें लग ाग इसी तरह के जवाब दिए।

"हमारी बात किसी ने ाी ध्यान से नहीं सुनी।" कालू और साँवरी ने दुखी मन से सोचा।

"तुम्हारी आवाज़ तो काफी बुलन्द है," पास ही खड़ा गुलाब का पौधा बोला, जिसकी टहनियों पर बड़े-बड़े सुर्ख फूल खिले थे। कालू-साँवरी

उसकी बात सुनने लगे। “मेरे विचार से तुम अपने बच्चे को ज़ोर-ज़ोर से पुकारो। वह सुनेगा तो ज़रूर तुम्हारे पास लौट आएगा।”

“यह सलाह अच्छी है।” उन्होंने सोचा और दोनों बारी-बारी से पुकारने लगे, “कुट्टू! कहाँ हो मेरे बच्चे? जल्दी आ जाओ।”

“तुम्हारे बिना हमने अ ी तक कुछ नहीं खाया है... मेरे बच्चे आ जाओ। हम तुमसे नाराज़ नहीं हैं।”

“कुट्टू... जल्दी आओ... कहाँ हो तुम?”

उनकी पुकार पत्ता-पत्ता सुन रहा था। सारी चिड़ियाएँ, गिलहरियाँ और वे स ी जो सुन सकते थे, सुन रहे थे और कह रहे थे, “बेचारे कालू-साँवरी!”

दरअसल वह कोयल का बच्चा था जो कालू के घोंसले में कालू के बच्चों के साथ ही पला और बड़ा हुआ था। अपनी असलियत जानते ही घोंसले से निकल ागा था। गुलाब की झाड़ियों में छुपा हुआ वह आगे बच निकलने की तरकीबें सोच रहा था।

शाम आसमान से उतरकर धरती पर आ गई थी। आसमान में उड़ते चहकते पक्षी घोंसलों की तरफ लौटने लगे थे। पेड़ों व छतों की मुण्डेरों पर शेष रहे एकाध धूप के टुकड़े को झोली में डालता अँधेरा गलियों-मैदानों में दबे पाँव उतरने लगा था।

कालू और साँवरी वास्तविकता से अनजान अब ी नीम की टहनी पर बैठे पुकार रहे थे, “कुट्टू! कुट्टू! तुम कहाँ हो मेरे बच्चे। हम तुम्हारा इन्तज़ार कर रहे हैं।”

वह बहुत ही सर्द और सन्नाटे से ारी रात थी। सर्दी के आतंक से सड़कें, गलियाँ सहमी हुई और खामोश थीं। पेड़-पौधे कोहरे की चादर लपेटने के बाद ी काँप रहे थे। लॉन में यूकेलिप्टस के पत्ते आँसू बहा रहे थे। यह सब देखकर मानो सितारे ी थरथरा उठे थे।

उस समय रात के लग ाग साढ़े बारह बजे होंगे। लेकिन श्रीमती वर्मा अ ी तक जाग रही थीं और लेट हुई ट्रेन की भतीक्षा करते यात्री की तरह वे बिस्तर के प्लेटफॉर्म पर लेटी थीं। नींद उड़ने का कारण कोई चिन्ता ी हो सकती थी और कड़ाके की सर्दी ी, जिसने पूरे कमरे पर कब्ज़ा कर रखा था। किवाड़ों की दरारों को ी कागज़ से बन्द कर दिया था और रज़ाई को चारों ओर से दबाकर वे कुछ गरमाने की कोशिश कर रही थीं। पर कहीं रह गई झिर्री से घुसकर सर्दी उस सारी कोशिश

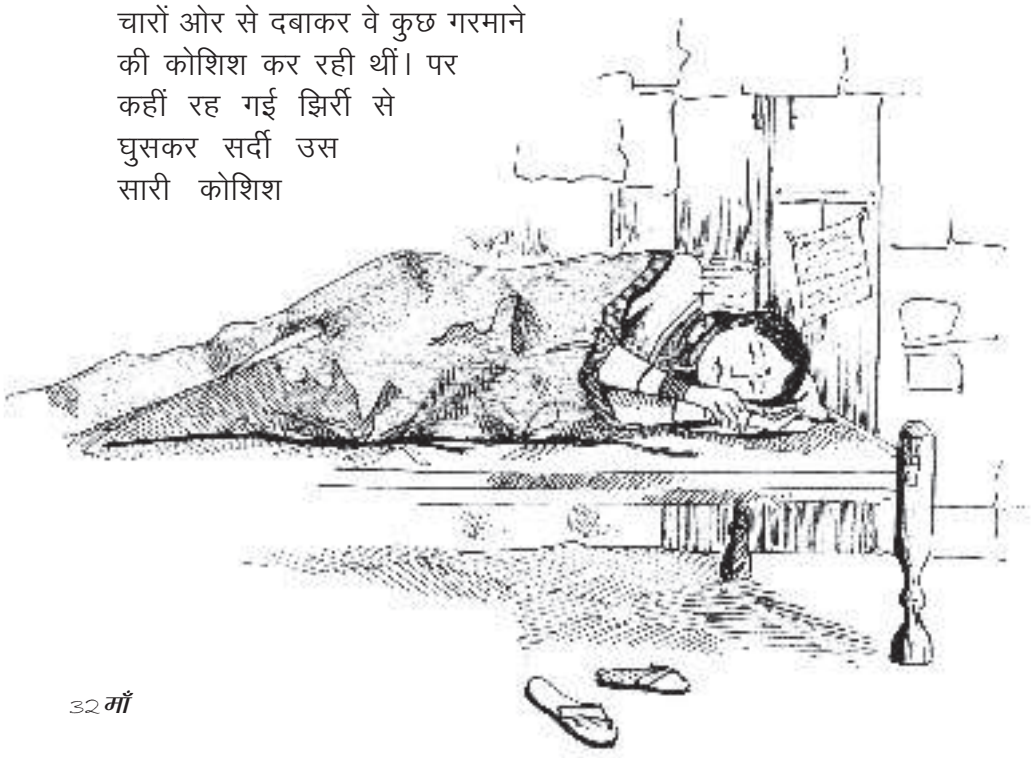

को नाकाम क
बुझा देता है।

लेकिन
दरार से आत
थी - "कूँ... कूँ

"कमबख
बारे में सोच
आ गया मरा
यह सारी कर

दीपू श्री
पढ़ने के लिए
हैं कि दीपू
गिलहरियों क
में लगता है।

क से सड़कें,
र लपेटने के
थे। यह सब

श्रीमती वर्मा
ी की तरह वे
चिन्ता ी हो
ज़ा कर रखा
ौर रज़ाई को

को नाकाम कर रही थी जैसे हवा का एक झोंका कई मोमबत्तियों को एकदम बुझा देता है।

लेकिन वास्तव में श्रीमती वर्मा की नींद उड़ने का कारण किवाड़ की दरार से आती पतली-सी आवाज़ थी जो क्रमशः अधिक कातर होती जा रही थी - "कूँ... कूँ... कूँ..."

"कमबख्त, फिर लौट आया शायद," श्रीमती वर्मा कुढ़ते हुए पिल्ले के बारे में सोच रही थीं। "खुद इतनी दूर छोड़कर आई थी। फिर ी लौटकर आ गया मरा। क्या इस तरह सूँघ-सूँघकर ही घर को तलाश लेता है?... यह सारी करामात दीपू की है।"

दीपू श्रीमती वर्मा यानी शो ा देवी का ानजा है। बड़ी ननद ने उसे पढ़ने के लिए ोया के यहाँ ोज दिया है। यह बात केवल शो ा देवी जानती हैं कि दीपू का मन पढ़ाई से ज़्यादा कुत्ते-बिल्ली के बच्चों से खेलने, गिलहरियों को मूँगफली के दाने खिलाने और बुलबुल के बच्चों को निहारने में लगता है। यही वजह है कि दोस्त के यहाँ पढ़ने के बहाने सक्सेना जी के

बगीचे में चला जाता है। शो ा देवी को दीपू के इस शौक से ज़्यादा आपत्ति तो नहीं पर घर में किसी ी जानवर के बच्चे, खासकर कुत्तों को लाने की सख्त मनाही है। वह बड़ी सफाईपसन्द महिला हैं। उनका छोटा-सा घर हमेशा धुला-निखरा देखा जा सकता है। वहाँ मक्खियाँ तक तो आने में संकोच करती हैं फिर पिल्लों-बिल्लों का क्या काम!

लेकिन पिल्लों को देखकर दीपू का जैसे खुद पर ही काबू नहीं रहता। मामी की वर्जना के बावजूद उसके साथ कोई पिल्ला अक्सर दिख जाता है।

उस दिन ी, यह जानते हुए कि पिल्ले को देखकर मामी का पारा चढ़ जाएगा, वह एक काले गोल-मटोल गुलफुले-से पिल्ले को ले आया। मामी ने देखते ही दीपू को बाहर ही रोक दिया, "अन्दर आना है तो इसे कहीं छोड़कर आ... नहीं तो तू ी इसके साथ बाहर गलियों में ाटक। मैं जीजी को खबर ोज दूँगी।"

"मामी! मेरी बात तो सुनो प्लीज़," गज़ब का ढीठ है दीपू ी। डरने की एक्टिंग करता हुआ पिल्ले को लिए ही अन्दर आ गया। "मैं तुम्हें नाराज़ नहीं करना चाहता था मामी विद्या-कसम... लेकिन क्या है कि बेचारा तीन दिन से ूखा है। इसकी माँ को कोई बेरहम कुचलकर ाग गया। रोज़ उसी जगह पर बैठा रहता था। सच्ची मामी इसे अ ी छोड़ आऊँगा। बस ज़रा-सा दूध दे दो!"

दीपू को यों मासूमियत के साथ रिरियाता देखकर शो ा देवी ने आधी कटोरी दूध दे दिया पर तुरन्त ही उसे छोड़ आने के लिए चेतावनी ी दी।

"लपक गया तो जाने का नाम नहीं लेगा। देखो ना दूध कैसे पी गया लप-लप करके," शो ा देवी बुदबुदाती रहीं। दीपू उसे छोड़ आया तो उन्होंने चैन की साँस ली। लेकिन शाम को देखा कि वही पिल्ला चौखट पार कर अन्दर आ रहा है।

"दीपू की चालबाज़ी खूब समझती हूँ। यहीं कहीं छोड़ आया होगा जानकर। सुनोजी! इस बार तुम कहीं दूर छोड़ आओ।" शो ा देवी ने अब अपने पति को तैनात किया।

लेकिन दो दिन बाद वह पिल्ला फिर दरवाज़े के अन्दर आँगन तक आ गया। शो ा

देवी ने पहले तो उसे पैर से दूर धकेला। मारे गुस्से के उसे खूब कोसा और फिर दीपू को लेकर काफी दूर तक नाले के किनारे पिल्ले को छुड़वा आईं।

दो-तीन दिन तक पिल्ला नहीं आया तो उन्हें यकीन हो गया कि इतनी दूर से वह लौटकर नहीं आएगा।

"लेकिन मैं तो आ गया।" बाहर से लगातार आ रही कूँ-कूँ की आवाज़ जैसे शो ा देवी को यही जता रही थी।

"आ गया तो मर...," शो ा देवी ने अपने आपको मुक्त करके सोचा। बाहर से पिल्ले की कातर आवाज़ बराबर आ रही थी। दीपू और उसके मामा गहरी नींद में थे पर शो ा देवी को लग रहा था कि रज़ाई के अन्दर ाी हाथ-पाँव जमे जा रहे हैं। सिकुड़ती हुई सोच रही थीं, "कमरे में, रज़ाई के ाीतर जब यह हाल है तो बाहर...? कहीं पिल्ला ठिठुरकर मर-मरा न जाए।"

इस विचार के साथ शो ा देवी रज़ाई में लेटी न रह सकीं। किवाड़ खोलकर बाहर आईं। देखा कि पिल्ला दीवार से चिपका काँप रहा था। मानो दीवार फोड़कर अन्दर छुप जाना चाहता हो। उसका कूँकना ाी अब धीमा हो गया था, जैसे बहुत रो लेने के बाद बच्चा निढाल हो जाता है।

शो ा देवी ने पिल्ले को काँपते हुए हाथों से उठाया और शॉल में लपेट लिया। वे खुद नहीं समझ पाईं कि उन्होंने कैसे उसे अन्दर लाकर अपने साथ अन्दर रज़ाई में सुला लिया। थोड़ी देर बाद ही उन्हें लगा कि नन्ही-सी धड़कनों से उसका नन्हा शरीर हिल रहा था। हल्की-सी घुरघुराहट उसकी राहत ारी गहरी नींद को ज़ाहिर कर रही थी। जैसे उनके पास नन्हा शिशु सो रहा हो... मासूम... अबोध...।

अब शो ा देवी को नींद आने लगी थी।

भैया का दोस्त

वह ाया का
मुझे नाम ही
दोस्त हम स
बाल, स्याह
झबरीली पूँछ
प्यारा दोस्त

"हाँ, हाँ
और पीछे ऐ
की गन्ध, 'बेच

"अरे ज
ी नहीं मेरा

"भेम क
खाता क्या ह

"बड़ी अ

ाया उ
उनकी दोस्ती
तब गया जब
मैंने ाया को
चार ठण्डी
खिलाते थे प

" ाया, र

"वो... व
रोटियाँ खाती
बोले।

"रोटियाँ
अन्दाज़ में व
सही... तू को

मैं ी पी
रोटियाँ एक

वह ौया का अजीब दोस्त था। यों तो ौया के दूसरे कई दोस्त थे जिनका मुझे नाम ही नहीं सूरत, गुण और स्व ाव सब कुछ मालूम था। पर वह नया दोस्त हम सबकी समझ से बाहर था। काफी बड़ा डील-डौल, बड़े-बड़े बाल, स्याह काला रंग, लम्बे कान, पल-पल झपकती-सी निरीह आँखें, झबरीली पूँछ, गन्दा-सा शरीर...। लेकिन ौया को वह प्यारा था, सबसे प्यारा दोस्त। ौया उसे 'बीसा' कहते थे और मैं उसे 'ढोंगी'।

"हाँ, हाँ, ढोंगी नहीं तो क्या? ौया को देखकर पूँछ हिलाने लगता है और पीछे ऐसी अकड़ दिखाता है जैसे शेर हो। ौया की आहट हो या रोटी की गन्ध, 'बेचारा' बन जाता है पेटू, ढोंगी।"

"अरे जा," ौया मेरी बात सुनकर चिढ़ जाते। "तेरी रोटियों को सूँघता ी नहीं मेरा बीसा। वह तो भेम का ूखा है बस!"

"भेम का ूखा है," मैं ौया की नकल उतारकर कहती। "रोटी नहीं खाता क्या हमारे घर?"

"बड़ी आई 'घर' वाली। तेरा ही घर है न जो धौंस जमाती है।"

ौया उसे बहुत चाहते थे। उतना ही जितनी मुझे उससे नफरत थी। उनकी दोस्ती का आरम्भ कब हुआ यह तो बताना कठिन है। पर मेरा ध्यान तब गया जब मैंने रोटियों का डिब्बा चाहे जब खाली होता पाया। एक दिन मैंने ौया को बगल में कुछ दबाकर ले जाते देखा तो पकड़ लिया। कागज़ में चार ठण्डी रोटियाँ थीं। अक्सर रात की बची रोटियाँ हम कजरी को खिलाते थे पर अब तो कजरी के लिए कुछ बचता ही नहीं था।

" ौया, ये रोटियाँ? किसके लिए?"

"वो... वो... बीनू... चिड़िया... नहीं-नहीं मछलियाँ हैं न, बड़े चाव से रोटियाँ खाती हैं। तू खुद देखना, सीप-सी चमकती हैं," ौया सकपकाकर बोले।

"रोटियाँ? मछलियों के लिए? मुझे तो नहीं लगता।" मैंने जासूसी वाले अन्दाज़ में कहा तो वे मुझे हटाते हुए बोले, "तो तुझे जो लगता है वही सही... तू कोई वकील है या जज है मेरी...?"

मैं ी पीछे न रही। धीरे-धीरे पता लगा ही लिया कि जनाब इतनी सारी रोटियाँ एक कुत्ते को खिलाते हैं। मुझे ौया की शिकायत करने का अच्छा

मौका मिल गया। बात यह थी कि हम स ाी को कुत्तों से बहुत नफरत थी। कुत्ते हमें गन्दगी और बीमारी का घर लगते थे। पिल्ले ज़रूर मुझे अच्छे लगते थे पर दूर से ही। और ैया थे कि कुत्ते को लपका रहे थे। एक बात मन में और ाी थी कि कुत्तों को चाहे कितने ही लाड़-प्यार से पालो-पोसो पर उनका अन्त कष्टदायक ही होता है। शायद इसीलिए किसी के बुरे से बुरे अनिष्ट के लिए उसे कुत्ते की मौत मरने का शाप दिया जाता है।

अब उन घरों की बात जाने दें जहाँ कुत्ता पालना एक फैशन है। वे कुत्ते विदेशी होते हैं। उनका रहन-सहन घर के सदस्यों की तरह होता है। खूब सफाई रखी जाती है। उन पर खूब पैसा खर्च किया जाता है। हमारे तो न घर में कुत्तों के लिए जगह थी, न ही दिलों में। फिर यह तो देशी और गन्दा रहने वाला कुत्ता था, वह ाी आवारा। पिताजी ने सुना तो खूब नाराज़ हुए।

"नालायक, गाय का हिस्सा कुत्ते को खिला रहा है? खबरदार जो तूने किसी कुत्ते को मुँह लगाया और उसे रोटी खिलाई।"

ैया सिर झुकाए सुनते रहे। किसी के गुस्से को सहन करने में वे बड़े माहिर हैं। बोलना तो दूर सिर तक नहीं उठाते। यही वजह है कि पिताजी का गुस्सा कम समय ही टिक पाता है। उस समय ैया का क्या ाव होगा, पता नहीं। पर कुत्ते के लिए उनका जो ाी ाव था वह बढ़ता ही गया, कम नहीं हुआ।

माँ इस विषय में कुछ उदार थीं। ैया को गुमसुम देखकर दो-चार रोटियाँ थमा ही देती थीं। पर बात यहीं तक नहीं रही। उसे आगे बढ़नी थी सो बढ़ी। हुआ यह कि एक दिन बीसा ैया के पीछे घर तक चला आया। मैं दावे के साथ कह सकती हूँ कि वह उनका संकेत पाकर ही आया होगा पर उस समय वे उसे बेबसी व अपराध-बोध के साथ झिड़कते आ रहे थे। ज़रूर पिताजी को दिखाने के लिए कि कुत्ते के आने में सचमुच उनका कोई हाथ नहीं है। लेकिन कुत्ता था कि ैया की हर झिड़की पर थोड़ा ठिठक जाता, आँखें झपकाता, फिर दबे पाँव पीछे चल देता। और इस तरह वह चबूतरे पर आ गया और पूँछ को पिछली टाँगों में दबाता हुआ, डरने का अिनय करता बैठ गया। ैया ने पिताजी की ओर देखते हुए उसे एक ज़ोर की ठोकर मारी, "चल, उठ... चल यहाँ से..."

फिर वे एक पतली-सी सण्टी उठा लाए। सण्टी को देखते ही वह कूँ-कूँ करता हुआ पसर गया मानो कह रहा हो, "अब क्या हो गया जो मारते हो

दोस्त!" साथ

ैया का
"उसे अब मा
रहेगा और क

अन्धा क
ऐसी आत्मीय
प्यार करते।
ईर्ष्या ाी बढ़
पैरों से आक
बैठा-बैठा आँ
टपकाता रह
कलेवर में क
नहीं क्या दिस

गर्मियों
कहीं से आक
ओर मुस्कुरा

दोस्त!" साथ ही यह ी कि, "मारो या दुतकारो, मैं यहाँ से नहीं जाऊँगा।"

ैया का यह तरीका कारगर रहा। सब देख-सुनकर पिताजी बोल पड़े, "उसे अब मारता क्यों है दिलीप! हौसला तो तूने ही बढ़ाया है उसका। बैठा रहेगा और क्या!"

अन्धा क्या चाहे दो आँखें। ैया फौरन उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगे। ऐसी आत्मीयता! मैं कुढ़ने लगी। यह दुष्ट न होता तो मेरे ैया सिर्फ मुझे प्यार करते। मेरा ही ध्यान रखते। उसके भति नफरत के साथ मेरे मन में ईर्ष्या ी बढ़ती गई। और क्यों न बढ़ती? धुले-पुछे फर्श पर कीचड़ से सने पैरों से आकर इस तरह बैठ जाता, जैसे यह घर हमसे ज़्यादा इसका हो। बैठा-बैठा आँखें मींचे हाँफता रहता। बालिश्त ार की जी ा निकाले लार टपकाता रहता। मुझे मतली-सी आने लगती। उफ! कितना गन्दा। पूरे कलेवर में कहीं ी तो ऐसी बात न थी जिस पर प्यार आए। ैया को पता नहीं क्या दिखता है इसमें?

गर्मियों की दोपहरी में दरी बिछाकर हम ताश या कैरम खेलते त ी कहीं से आकर वह ैया के बगल में ैया से सटकर बैठ जाता। ैया मेरी ओर मुस्कुराते हुए उसकी गर्दन में हाथ डालकर दुलारते। मैं रुआँसी-सी

हो जाती। जी करता कि कसकर दो-चार डण्डे जमा दूँ। कई बार मैंने ऐसा करना ाी चाहा पर डण्डा हाथ में देखते ही कमबख्त ऐसे चिल्लाता था कि डण्डा तुरन्त फेंकना पड़ता था।

ाया तो खैर उसके लिए सब कुछ थे ही। माँ और पिताजी के दुतकारने पर ाी वह पीठ के बल लेटकर पूँछ हिलाकर और पंजे बढ़ाकर कृतज्ञता व्यक्त करता था। पर मुझे देखकर ऐसी उपेक्षा दिखाता कि मैं कटकर रह जाती थी। कई बार दरवाज़े पर जाकर बैठ जाता था। मैं शिकायत करती, "देखो ाया, तुम्हारा बीसा मेरे हाथ से रोटी नहीं खाता।"

"तू उसे प्यार से थोड़े ही खिलाती है? देख," और वे उसे पुचकारकर कहते, "आ बीसा, रोटी क्यों नहीं खाता?" ताज्जुब कि वह उन्हीं रोटियों को खा लेता।

"मानती हो? रहीम ने झूठ नहीं लिखा कि अमिय पियावत मान बिन... मेरा बीसा तो इन्सान से ाी ज़्यादा समझदार है।"

एक सुबह माँ रात की बात सुना रही थी कि "बीसा रात के ग्यारह बजे आया और आँगन में अड़कर बैठ गया। खूब ागाने के बाद ाी नहीं गया। बल्कि पीठ के बल लेटकर पेट को दिखाने लगा। तब माँ ने तीन-चार

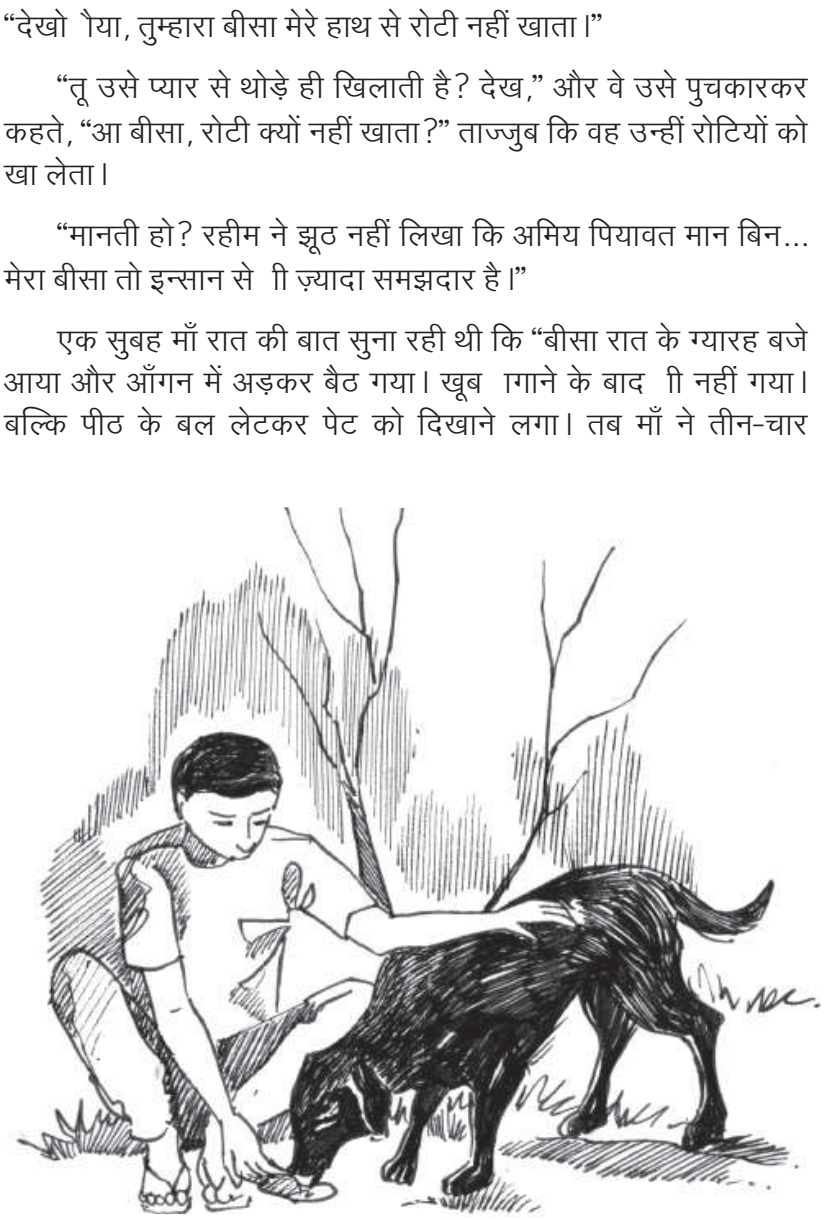

रोटियाँ बना
तरह।" माँ ब

"ाया तो

"ठीक है
तुम रोटी बन
हज़म नहीं हो

"नहीं बे
आता है।" माँ
वह कुत्ता मेरे

क ाी-क
है, पंजे बढ़ात
पाई।

एक बा
हड्डी दिखने
है गाँव में। उ
जब वह लँग
थी। पर अब
ागता। तब
तुमने है पर

ाया चुप
महसूस करते
हो जाए तो...
मदद से बीस
कोशिश करत

एक दिन
कोई फर्क नह
लगाव बढ़ना
पहले की तर
ही था।

इस घट

बार मैंने ऐसा
ल्लाता था कि

के दुतकारने
कर कृतज्ञता
ं कटकर रह
ायत करती,

पुचकारकर
हीं रोटियों को

मान बिन...

क ग्यारह बजे
ी नहीं गया।
ने तीन-चार

रोटियाँ बनाईं। खाकर वह बिना कहे चला गया, आज्ञाकारी बच्चे की तरह।" माँ बड़ी आत्मीयता से सारा हाल बयान कर रही थी।

"ैया तो ैया अब माँ ी!" मेरी ईर्ष्या की आग में तो जैसे घी पड़ गया।

"ठीक है माँ! हमसे तो वह कुत्ता ही ाला। अगर मैं ूखी होती तो क्या तुम रोटी बनातीं? नहीं। कह देतीं, सो जा बेटी, देर रात की खाई रोटी हज़म नहीं होती। वाह रे जानवर...।"

"नहीं बेटे नहीं," माँ समझाने लगी। "बेचारा जानवर है, आस लगाए आता है।" माँ कहती रही पर मेरी समझ में केवल एक बात आ रही थी कि वह कुत्ता मेरे लिए मनहूस है। उसके कारण मैं अकेली होती जा रही थी।

क ी-क ी मेरा मन होता कि जिस तरह ैया को देखकर पूँछ हिलाता है, पंजे बढ़ाता है, मुझे देखकर ी करे। पर मैं अपनी घृणा से उबर ही नहीं पाई।

एक बार किसी ने उसके पैर में कुल्हाड़ी मार दी। घाव गहरा था। हड्डी दिखने लगी थी। बरसात के दिन थे। चारों ओर वैसे ी कीचड़ होती है गाँव में। ऊपर से कुत्ते का घाव। आखिर वही हुआ जिसका डर था। पहले जब वह लँगड़ाता, छटपटाता घर की ओर आता था मैं किवाड़ लगा लेती थी। पर अब नहीं लगा पाती और वह अन्दर आ जाता, ागाने से ी नहीं ागता। तब मेरा जी खराब हो जाता और मैं कहती, "ैया आफत पाली तुमने है पर ुगतेंगे हम सब... यह यहीं सड़ेगा, मरेगा।"

ैया चुपचाप सबकी बातें सुनते रहते। अपने दोस्त की पीड़ा को खुद महसूस करते रहते। कहते तो केवल इतना कि, "अगर तुम्हें कुछ इसी तरह हो जाए तो...।" फिर वे कहीं से दवा ले आते और अपने दोस्त हेमन्त की मदद से बीसा के घाव में लगाते। वह पीड़ा से तड़पता दूर ागने की कोशिश करता पर ैया की डाँट खाकर चुप हो जाता।

एक दिन ैया ने खुश होकर बताया कि बीसा ठीक हो गया है। पर मुझे कोई फर्क नहीं पड़ा क्योंकि कुत्ते का घर में आना और ैया का उसके भति लगाव बढ़ना कम नहीं हुआ था। बल्कि अब वे मुझसे कुछ कट-से गए थे। पहले की तरह न मुझे चिढ़ाते थे न मनाते थे। बेशक, इसकी वजह वह कुत्ता ही था।

इस घटना के लग ाग तीन महीने बाद एक दिन मैंने ैया को बहुत

उदास व गुमसुम देखा। पेट दर्द का बहाना बनाकर लेटे रहे। खाना नहीं खाया। क ी तो अकेले ही कमरे में दिखे तो क ी छत पर। मुझसे उनकी बेरुखी न देखी गई। पास जाकर पूछा, "ैया क्या बात है? कोई परेशानी है?" ैया ने कोई जवाब नहीं दिया। मैंने निकटता बढ़ाने के लिए पूछा, "ैया, कल से बीसा नहीं आया।" उन्होंने इस बात पर मुझे अजीब-सी नज़रों से देखा, होंठ कुछ हिले, फिर मुँह फेर लिया।

मैंने फिर पूछा, "ैया कुछ बोलते क्यों नहीं?

"तुम्हें क्या लेना-देना है बीसा से?... नहीं आ रहा तो तुम्हारे लिए खुशी की बात है... हँसो... तालियाँ बजाओ।" अचानक ैया पलटकर बोले।

मैं सकते में आ गई। पहली बार ऐसा रूप देखा था अपने ैया का। वे मुझे बहुत प्यार करते थे। अपनी हर बात मुझे एक दोस्त की तरह बताते थे, "बीनू यह बात... बीनू वह बात।" पढ़ाई खत्म करके घर बैठे थे पर क ी नहीं लगा कि वे पढ़े-लिखे, घर बैठे नौजवान हैं। छोटे बच्चों की तरह खाना, पहनना, रहना। मैं उनसे आठ साल छोटी हूँ पर उनकी हर बात की राज़दार रही हूँ। उनकी हर खुशी में शरीक। पिताजी से ी कोई बात मेरे द्वारा ही कहलवाते हैं। वही मेरे ैया इतने दुखी और नाराज़?

दो दिन बाद हेमन्त ने मुझे बताया कि बीसा दुनिया को छोड़ गया। सुनकर मेरा तो दिमाग चकरा गया। बीसा मर ी गया? कब? कैसे?

जब बीसा एक दिन घर नहीं आया तो ैया व हेमन्त उसे ढूँढने गए थे। गाँव से कुछ दूर एक आम के पेड़ के नीचे उन्होंने बीसा को तने के सहारे सोते हुए पाया। उन्होंने दूर से बीसा को पुकारा। जो बीसा उनकी आहट सुन के दौड़ पड़ता था, वह आवाज़ देने पर ी नहीं उठा। आशंकित से जब वे पास पहुँचे तो पाया कि बीसा अब क ी नहीं उठेगा।

ैया देर तक चुपचाप आँसू बहाते रहे। फिर दोस्त के साथ मिलकर उसे समाधि दी। सुनकर मेरा दिल हिल गया।

बीसा मरा ी तो इतनी दूर जाकर। क्या मेरे विश्वास को झुठलाने के लिए कि "वह मरते दम तक हमें तंग करेगा।" अकेला, निरीह एकान्त में जाकर वह इस तरह दुनिया से चला गया। मेरी आँखें छलछला उठीं। बीसा ने जैसे मेरी घृणा और सफाई के आडम्बर पर तमाचा मार दिया था। काश! मैं उसे समझ पाती और ैया की तरह उससे एक रिश्ता बना पाती।

। खाना नहीं
मुझसे उनकी
कोई परेशानी
के लिए पूछा,
झे अजीब-सी

रे लिए खुशी
र बोले।

ाैया का। वे
रह बताते थे,
थे पर क ाी
तरह खाना,
हर बात की
कोई बात मेरे

छोड़ गया।
कैसे?

ढूँढने गए थे।
तने के सहारे
उनकी आहट
ांकित से जब

साथ मिलकर

झुठलाने के
ह एकान्त में
उठीं। बीसा
था। काश!
ाती।

गिरिजा कुलश्रेष्ठ

शासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, ग्वालियर में व्याख्याता। 'लम्बे समय' से बाल कहानियाँ और कविताएँ लिख रही हैं। रचनाएँ *चकमक*, *समझ झरोखा*, *पलाश*, *बालवाटिका*, *हिन्दुस्तान*, *दैनिक ास्कर* आदि पत्र-पत्रिकाओं में भकाशित। दो कहानियाँ चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट से पुरस्कृत। बाल कहानी संग्रह *अपनी खिड़की से* तथा बाल खण्डकाव्य *ध्रुवगाथा* भकाशित। बाल उपन्यास *गिल्लू की सैर* तथा किशोर उपन्यास *बिना छत वाला घर* रचनाधीन हैं।

सौम्या शुक्ला

11वीं कक्षा में पढ़ती हैं और बचपन से ही रंगों से खेलती और आकृतियाँ गढ़ने की कोशिश करती रही हैं। धीरे-धीरे इन्हीं आकृतियों ने शक्ल ली। पेस्टल, पेंसिल, स्केच पेन के साथ ही डरते-डरते जलरंगों का भयोग किया फिर उसमें आनन्द की अनु ूति पाई। कई डॉक्यूमेंट्री फिल्मों की सी.डी./ डी.वी.डी. व कुछ पत्रिकाओं के लिए आवरण चित्र बनाए। एकलव्य की पत्रिका *संद र्* के लिए ाी चित्रांकन। सृजनात्मक कला के लिए राष्ट्रीय बालश्री सम्मान-2011 से नवाज़ी गईं। कला जगत में ही आगे बढ़ने की इच्छुक हैं।

एकलव्य

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो पिछले कई वर्षों से शिक्षा एवं जनविज्ञान के क्षेत्र में काम कर रही है। एकलव्य की गतिविधियाँ स्कूल में व स्कूल के बाहर दोनों क्षेत्रों में हैं।

एकलव्य का मुख्य उद्देश्य ऐसी शिक्षा का विकास करना है जो बच्चे से व उसके पर्यावरण से जुड़ी हो; जो खेल, गतिविधि व सृजनात्मक पहलुओं पर आधारित हो। अपने काम के दौरान हमने पाया है कि स्कूली प्रयास तभी सार्थक हो सकते हैं जब बच्चों को स्कूली समय के बाद, स्कूल से बाहर और घर में भी, रचनात्मक गतिविधियों के साधन उपलब्ध हों। किताबें तथा पत्रिकाएँ इन साधनों का एक अहम हिस्सा हैं।

पिछले कुछ वर्षों में हमने अपने काम का विस्तार प्रकाशन के क्षेत्र में भी किया है। बच्चों की पत्रिका *चकमक* के अलावा *स्रोत* (विज्ञान एवं टेक्नॉलॉजी फीचर्स) तथा *शैक्षणिक संदर्भ* (शैक्षिक पत्रिका) हमारे नियमित प्रकाशन हैं। शिक्षा, जनविज्ञान एवं बच्चों के लिए सृजनात्मक गतिविधियों के अलावा विकास के व्यापक मुद्दों से जुड़ी किताबें, पुस्तिकाएँ, सामग्री आदि भी एकलव्य ने विकसित एवं प्रकाशित की हैं।

वर्तमान में एकलव्य मध्य प्रदेश में भोपाल, होशंगाबाद, पिपरिया, हरदा, देवास, इन्दौर, उज्जैन, शाहपुर (बैतूल) व परासिया (छिन्दवाड़ा) में स्थित कार्यालयों के माध्यम से कार्यरत है।

इस किताब की सामग्री एवं सज्जा पर आपके सुझावों का स्वागत है। इससे आगामी किताबों को अधिक आकर्षक, रुचिकर एवं उपयोगी बनाने में हमें मदद मिलेगी।

सम्पर्कः books@eklavya.in
ई-10, शंकर नगर बी.डी.ए. कॉलोनी, शिवाजी नगर,
भोपाल - 462016